स्वयं की साधना

आत्मानुभूति के आनंद में स्थित होना। साधना के पथ में स्वानुभूति का आनंद लेना यह एक साधना पथ का मुख्य अंग है।अपने आप में खो जाना। यानी स्वयं जो है जैसा है उस अस्तित्व को पहचानना यह जीवन यात्रा की बड़ी उपलाब्धि है, उसके लिए एकांत व एकाकीपन में समय को बिताना , अपनी स्वानुभूति के मस्ती का आनंद का लुप्त उठाना यही जीवन यात्रा में बेटरी चार्ज करने के बराबर है।

कोई भी साधक बिना एंकांत अपने लक्ष्य अर्जित नहीं कर सकता। एकांत में बैठे एकाकीपन का अनुभव फुल के समान है। साधक के हृदय के अंदर में विकसित हुआ एक कमल है। या यू कहे कि एकाकीपन विधायक है, एकाकीपन स्वास्थ्य है - अपनी निजता में जीने का आनन्द, स्वयं अपने अंतर्आकाश में जीने का आनंद।

योग का अर्थ ही है- अकेले होने का आनंद । तुम सच में जीवन होते हो जब तुम योग में सक्षम हो जाते हो , जब कभी दूसरे पर, किसी परिस्थिति पर, किसी अवस्था पर कोई निर्भरता नहीं रहती और चूंकि यह तुम्हारी अपनी स्थिति होती है, यह सदैव बनी रहती है- सुबह शाम, दिन में रात में, जवानी में या बुढ़ापे में, स्वास्थ्य में या बीमारी में । जीवन में और मृत्यु में भी यह मौजूद होता है क्योंकि यह ऐसी चीज नहीं है जो तुम्हें बाहर से घटती हो । इसका तुम्हारे भीतर से प्रादूर्भाव होता है। यह तुम्हारा अपना स्वभाव है, स्वरूप है।

ब्र.कु.गंगाधर

अंर्तयात्रा परम एकाकीपन की एक और यात्रा है। तुम अपने साथ वहां किसी को नहीं ले जा सकते । तुम अपने केंन्द्र में किसी को भागीदार नहीं बना सकते-अपने प्रिय जनों को भी नहीं ले जासकते। चीजों का ऐसा स्वभाव ही नहीं है। इस बारे में कुछ भी नहीं किया जा सकता। जिस क्षण तुम भीतर जाते हो ,बाहर के सारे संबध टूट जाते है, सब सेतू टूट जाते है। वास्तव में, सारा जगत विलीन हो जाता है।

इसी कारण से रहस्यदर्शियों ने इस जगत को 'माया' कहा है। ऐसा नहीं कि संसार नहीं है। लेकिन योगी के लिए, जो भीतर जाता है उसके लिए यह जगत करीब-करीब मिट जाता है। उसका मौन इतना गहन हो जाता है कि काई शोरगुल उसे बेघता नहीं । एकाकीपन इतना गहरा होता है कि तुम्हें बड़े साहस की जरूरत पड़ती है । पर इसी एकाकीपन से आनंद का उदय होता है । इसी एकाकीपन में परमात्मा की अनुभूति होती है । दूसरा कोई मार्ग नहीं है।

एकाकीपन का उतसव मनाओ, अपने विशुद्ध अंतर्आकाश का उत्सव मनाओ और तुम्हारे हृदय में एक सुमधुर जीत फूटेगा। और यह जागरूकता की जीत होगी । दूर से आता हुआ मधुर ध्वनि का गीत होगा - किसी व्यक्ति -विशेष के लिए नहीं, पर गीत बस चल रहा है। क्योंकि हृदय भरा है और गाना चाहता है क्योंकि मेघ भरा है और गाना चाहता है , क्योंकि मेघ भरा है और वरसना चाहता है, क्येकि फूल विकसित हो गया है और पंखुडिया खुल गई है और सुवास फैलता है- बिना किसी को सम्बोधित किए। इस तरह अपने एकाकीपन को सुंदर नृत्य बना दो

योग कुछ और नहीं बस एक उपाय है तुम्हें अपने सच्चे स्वरूप गति सजग करने का - वह तुम्हारा निर्माण नहीं है , तुम वह होते ही हो। उसके साथ ही तुम जन्मे हो। तुम वही हो। बस इसका आविष्कार करना है। यदि यह संभव नहीं है या समाज ऐसे होने नही देता- और कोई समाज इसे होने की सुविधा नहीं देता। क्योंकि प्रमाणिक निजता खतरनाक है, : खतरनाक है मान्यताओं के लिए, खतरनाक है सरकार के लिए , खतरनाक है भीड़ के लिए, खतरनाक है परंपरा के लिए, क्योंकि एक बार मनुष्य अपने सच्चे स्वरूप को जान ले, फिर वह एक व्यक्ति बन जाता है, वह फिर भीड़ के मनोविज्ञान का हिस्सा नहीं रह जाता, वह फिर अंध

(शेष पेज 4 पर)

मन रूपी घोड़े को अच्छा खाना व मालिस ठीक से करो

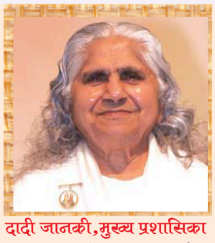

दादी जानकी,मुख्य प्रशासिका

प्रश्न-यदि कोई सेवा में बहुत बिजी है, योग के लिए समय नहीं मिलता -तो क्या वह कर्मातीत अवस्था तक पहुँच सकेंगे ?

दादी जी - मेरा अनुभव कहता है कि जिन कर्मबन्धनों से हम फंसे हैं, उन सबसे फ्री होने के लिए इतने ही श्रेष्ठ कर्म चाहिए। सिर्फ योग ही काम नहीं करता। योग भी तब लगेगा जब श्रेष्ठ कर्म होंगे। योग से हमारे पास्ट कर्मों का हिसाब-किताब भी चुकतू तब होता है जब अभी श्रेष्ठ कर्म साथ-साथ हैं। योग से बुद्धि अशुद्ध से शुद्ध बनती है। वह शुद्ध सोचना सीखती है। आप निगेटीव छोड़ दो, साधारण व व्यर्थ संकल्प छोड़ दो, शुद्ध सकारात्मक संकल्प करो...इसके लिए टाइम की जरूरत नहीं है। कर्म करते भी मेरी बुद्धि शुद्ध है, परमात्मा बाप से जुटी हुई है तो मैं योगी हूँ। अगर मेरी बुद्धि शुद्ध नहीं है, किसी बात का असर है, कोई सोच विचार वा चिन्तन है तो मैं योगी नहीं। इसलिए योग में श्रेष्ठ कर्म हमें बहुत मदद करते हैं। कई बार १८ घण्टे सेवा करते भी यह फील नहीं होता कि सेवा के कारण मुझे आराम ही नहीं मिलता। सेवा तो मुझे दुआएं देती है। सेवा अगर मेरे जीवन में न होती तो हम जिन्दा ही नहीं होते। जिन्दा होते भी तो किस काम के। दूसरों को हमारे द्वारा बल मिले, शान्ति मिले। अगर मुझे आत्मा से अनेकों को सहयोग मिला तो वह सहयोग ही सिद्ध करता है कि हम योगी है। हम योग लगाते हैं बाबा से सहयोग लेने के लिए। योगी ही सबका सहयोगी बनता है। सेवा माना सहयोगी बनना, हर बात में हाथ बढ़ाना। बुद्धि की मदद करना, दिल से शुद्ध वायब्रेशन की स्नेह भरी मदद करना। यह योग सहयोग एक होता जा रहा है। इतनी यज्ञ सेवा सबके सहयोग से हो रही है, किसमें कोई विशेषता है, किसमें कोई। ईश्वरीय परिवार का स्नेह और सहयोग भी हमको योगयुक्त बनाता है। तो हम कर्म और योग को अलग नहीं कर सकते। यज्ञ सेवा करना भी किसके भाग्य में हो। संगठन में रहना भी किसके भाग्य में हो। कभी अपनी जीवन साधारण नहीं समझो। बाबा ने मुझे भाग्य दिया है कर्म करने का। इससे बड़ा योग और क्या है। यह मेरे योग की,शुद्ध संकल्प की कमाल है। दिल सच्ची है तो आत्मा को जिस घड़ी जिस सेवा की जरूरत है वह बाबा करा लेता है। सिर्फ हमें हाँ-जी करना है। हम कभी यह कह नहीं सकते कि हमें योग लगाने का टाइम नहीं मिलता जो सेवा मिलती है मैं उसमें खुश हूँ, बाबा का मेरे पर अधिकार है। मेरी पर्सनल उन्नति - मेरे सच्चाई से, सम्बन्ध से, बुद्धि कहां लीक न हो, गम्भीरता, सयानप मेरे पास हो, ईमानदारी मेरे पास हो, इसी से होगी। मैं सेवा छोड़कर योग में बैठ जाऊं, नहीं। मेरा दिल खाता है। जिस सेवा अर्थ आई हूँ, वह मुझे बजानी है। जिस घड़ी जो काम है वह ईमानदारी व सच्चाई से करना भी योग है। तो हर बात में सच्चा सहयोगी बनने वाला ही अपना सुंदर रिकार्ड बाबा के पास रखता है। बस बाबा मुझे और कुछ नहीं चाहिए, आपका सहयोग हो और जितना मुझ आत्मा से हो सकता है, श्रेष्ठ कर्म करता चलूं -इससे कर्मातीत अवस्था बनी पड़ी है। कर्मातीत बनने वालों की भी लाइन लग जायेगी।

प्रश्न -पाप कर्म क्या है ?

दादी जी - पाप वह है जहां कान्सेस खाता है। विवेक खाता है -वह नहीं करना चाहिए। पुण्य वह है जिसमें अपना कान्सेस माने कि यह काम ठीक हुआ। मन उल्टा सीधा दोनों करता है। बुद्धि जानती है यह उल्टी बात है या सीधी बात है, तो भी संगदोष या पुराने संस्कारवश उल्टा कर लेती है। पीछे विवेक खाता है। विवेक किसी को भी छोड़ता नहीं है। बुद्धि प्रभाव में आई, संस्कारों के वश हुई, विवेक नहीं छोड़ता। जब एकांत में होगा, शान्त होगा तो विवेक अंदर मारता है। किसी ने बुरा नहीं किया होगा तो सीधा कहेगा मैने नहीं किया, मेरा विवेक नहीं कहता। तो जिसमें अपना विवेक खाता है वह काम हमें नहीं करना है। जिस काम के लिए दिल मानती है वह करते चलो।

प्रश्न- दादी मनपर लगाम कैसे लगाय आशरीरी, विदेही, निराकारी बनने की मन में लगन है तो जो बाबा के बोल सुनें, वह हमारे जीवन में हों । अन्दर से रिहर्सल (अभ्यास) करें अशरीरी स्थिति, फिर विदेही स्थिति पहले मैं अशरीरी आत्मा हूं, फिर विदेही फिर निराकरी, फिर अव्यक्त फ़रिश्ता फिर अकारी अगर इसी तरह से हमने अपने आपको इन स्थितियों में रखा तो मन मौज में आ जायेगा। मन खुश हो जायेगा। इसलिए भटक रहा था बेचारा मन, इसलिए अशान्त हो रहा था, क्योंकि उसको जो खुराक चाहिए ीि वह नहीं मिली थी और देह, सम्बन्ध, दुनिया में फंस गया। अभी उसको छुड़ाया । मन को खुशी की अच्छी खुराक खिलाओ तो खुश होता है। कहते हैं मन घोड़ा है और जो घोड़ो को सम्भालने वाले होते हैं उनको अक्ल होता है कि घोड़े को कैसे सम्भाला जाता है । घोड़े को खाना ठीक खिलाओ , मालिश अच्छी तरह से करो तो वह खड़ा हो जाता है, उसको नशा है कि कौन मेरा मालिक है। अगर उसको ठीक खाना नहीं खिलाते हैं, पूरी सम्भाल नहीं करते हैं तो परेशान करता है। तो कईयों का मन परेशान करता है। तो कईयों का मन परेशान होता है क्योंकि प्यार से बैठकर उसकी मालिश नहीं की है।

परमात्मा में मन लगाने के लिए इस देह को भूलना होगा

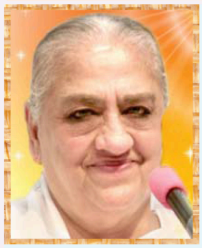

दादी हृदयमोहिनी,अति.मुख्य प्रशासिका

एक बार किसी ने बाबा को कहा कि बाबा! मैं आपको बहुत याद करता हूँ लेकिन आप रेस्पान्ड नहीं देते, आपसे बहुत बातें करता हूँ लेकिन मैं ही करता हूँ, आपका जवाब नहीं आता है। तो बाबा ने कहा, आप पहले आत्मा समझकर मेरे से बात करते हो या देह भान में बाबा को याद करते हो ? तो उसने कहा, उस समय होता तो देहभान ही है। जो समस्या है वह याद रहती है, उसी स्मृति में रहता हूँ । तो बाबा ने कहा, इसलिए मेरा रेस्पान्ड कैच नहीं कर सकते हो।

हम बाबा को सतगुरू कहते हैं, भक्ति में भी गुरू किसलिए करते हैं? समझते हैं गुरू ही पार ले जायेगा। तो शिवबाबा तो पार ले ही जाने वाला है, क्योंकि उसी को ही पतित-पावन कहा जाता है। उसी को सद्गति दाता, मुक्ति-जीवनमुक्ति दाता कहा जाता है। तो वह हमारा सद्गुरू भी है, जब हम उसकी मत पर चलते हैं तो आशीर्वाद स्वत: मिलती है। हम समझते हैं बाबा हमारे ऊपर थोड़ी कृपा कर दो ना, आप दयालु हो ना, थोड़ी दया कर दो। तो बाबा कहते हैं दया करने के लिए तो मैं तैयार हूँ और तुम अधिकारी हो। तुम्हारा हक है बाप के ऊपर, क्यों नहीं करेगा, बच्चे के ऊपर नहीं करेगा तो क्या कोई भगत के ऊपर करेगा! लेकिन इतना अधिकार है, इतना नशा है, इतना फखुर रहता है कि परमात्मा की संतान हूँ? या काम करते एक्शन कान्शियस हो जाते हैं। जो काम कर रहे हैं उसी के ही कान्शियस बस, खाना बना रहे हैं या कोई भी काम कर रहे हैं, दफ्तर का कर रहे हैं, घर का कर रहे हैं, जो काम किया उसी के ही संकल्प चल रहे हैं। उसमें शिवबाबा की याद नहीं रहती। फिर कहते भगवान की याद में मन ही नहीं लगता। तो जरूर कोई गलती है। देखो मंदिर में भी जाओ तो कहते हैं वहां चमड़ा नहीं ले जा सकते। जबकि जड़ चित्र हैं वहां कहते हैं चमड़े का सामान नहीं ले जाओ। तो यहाँ भी परमात्मा से मिलने के लिए वा उससे मन लगाने के लिए इस चमड़ी अर्थात देह को भूलना होगा। इस चमड़ी का भान छोड़ना पड़ेगा। जैसे जूता और चमड़े का सामान छोड़कर मंदिर के अंदर जाते हैं वैसे इस देह-भान को छोड़ने बिगर मिलन नहीं हो सकता।

अष्टावक्र की कहानी भी सुनाते हैं कि जब राजा ने एलान किया मुझे सेकण्ड में कोई जीवनमुक्ति दे। तो बहुत विद्वान और बड़े-बड़े लोग आये, लास्ट में अष्टावक्र आया तो अष्टावक्र को देखकर सभा में जो लोग बैठे थे वह हँसने लगे कि यह आठ कुख वाला आया है जीवनमुक्ति देने । तो अष्टावक्र ने उस समय यही कहा कि यह जो सभा है यह सारी चमारों की सभा है। सब सोचने लगे हम इतने बड़े विद्वान, आचार्य, यह सबको चमार कह रहा है। तो अष्टावक्र ने बताया कि मैं चमार क्यों कहता हूँ? क्योंकि तुम चमड़ी को ही देख रहे हो, आत्मा को तो देखा ही नहीं। चमड़ी को ही देखा इसलिए चमारों की सभा हुई ना! तो पहले यह देह (चमड़ी) जो है, इसके भान को भूलना पड़े, तब आत्मा का सम्बन्ध आप सेकण्ड में अनुभव कर सकते हो।